Impact Factor = 4.153, http://www.epitomejournals.com, Vol 4, Issue 7, July 2018, ISSN 2395-6968

Epitome : International Journal of Multidisciplinary Research

ISSN : 2395-6968

हरिशंकर परसाई के निबंधों में समाज एवं धर्म विषयक व्यंग्य

डॉ. अरूण गंभीरे

विभाग अध्यक्ष एवं सहयोगी प्राध्यापक,

हिंदी विभाग, कर्मवीर मामासाहेब जगदाळे महाविद्यालय, वाशी

Email : arungambhire20@gmail.com

प्रस्तावना : -

साहित्य समाज का दर्पण होता है। प्रस्तुत मान्यता के अनुसार समाज में प्रचलित रीति-रिवाज, तीज-त्योंहार, रुढि-परंपराएँ एवं प्रथाएँ जब समय के वेग से पिछड जाती है तब आम आदमी का जीवन क्षत-विक्षत हो जाता है। जब सामाजिक शिकंजे और प्रतिमान शिथिल पड जाते हैं, तब मनुष्य उस समाज से कहीं आगे बढ चुका होता है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति एवं समाज सामाजिकता एवं परंपरा का अंतराल एक अव्यवस्था को जन्म देता है। इस अव्यवस्था का प्रभाव व्यक्तिगत आचरण, पारिवारिक जीवन तथा सामाजिक व्यवहार आदि पर पडता है। मृतप्राय परंपराओं पर मर्मभेदी प्रहार करता है। साहित्यकार के इस प्रहार का प्रयोजन समाज की सडी-गली व्यवस्था की निंदा करना तथा उसकी अनुपयोगिता साबित कर समाज को प्रगति पथ पर अग्रेसर करना ही होता है। वर्तमान काल में हिंदी साहित्य बहुत समृद्ध हुआ है। इसमें व्यंग्यात्मक प्रवृत्ति को अपनाकर समाज में परिवर्तन लाने हेतु लिखनेवालों की बडी लंबी शृंखला है। हिंदी में व्यंग्यात्मक शैली में लिखनेवालों की परंपरा को निभानेवालों में हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, डॉ. नरेंद्र कोहली, रामावतार त्यागी, श्रीलाल शुक्ल, डॉ. शंकर पुणतांबेकर, इंद्रनाथ मदान, लतीफ घेंघी, बाबूराम सक्सेना, बरसानेलाल चतुर्वेदी, बालेंदुशेखर तिवारी तथा धूमिल आदि लेखक-कवियों का योगदान रहा है।

 Dr. Pramod Ambadasrao Pawar, Editor-in-Chief@EIJMR, All the rights reserved.

समाज में धर्म का अनन्य साधारण महत्त्व है। कहना होगा कि समाज में धर्म और धर्म पर समाज आधारित हैं। अर्थात दोनों एक-दूसरे के पूरक अंग हैं। सामाजिक और धर्मिक पक्ष हरिशंकर परसाई के निबंधों में प्रचुर मात्रा में उपस्थित हैं। परसाई ने समाज और धर्म की खूब खबर ली हैं। यही कारण है कि प्रस्तुत आलेख में हरिशंकर परसाई के निबंधों में समाज एवं धर्म विषयक व्यंग्य विषय को चुना हैं।

* व्यंग्य विषयक मान्यताएँ : -

व्यंग्य की उत्पत्ति, परिभाषाएँ एवं व्यंग्य विधा है या शैली ? इन विष्यों को लेकर प्रचुर मात्रा में विचार मंथन हुआ हैं। उसके अनेक अर्थ प्रचलित हैं। परंतु वर्तमान साहित्य के संदर्भ में व्यंग्य को अंग्रेजी satire के प्रतिरूप में देखना ही युक्तिसंगत है। व्यंग्य को अनेकविद् पाश्चात्य एवं भरतीय विद्वानों ने परिभाषाबद्ध करने का प्रयास किया है। स्वयं हरिशंकर परसाई व्यंग्य को जीवन से साक्षात्कार करानेवाला माध्यम स्वीकार करते हुए लिखते हैं - ‘‘व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार कराता है, विसंगतियों, मिथ्याचारों और पाखंडों का पर्दाफाश कराता हैं।’’[१]

व्यंग्य को लेकर एक अहम प्रश्न उपस्थित हुआ है कि व्यंग्य विधा है या शैली ? मेरी अपनी मान्यता है कि व्यंग्य विधा नहीं, वह एक अभिव्यक्ति प्रणाली है, एक शैलीगत प्रवृत्ति भी । व्यंग्य, साहित्य की किसी भी विधा में आ सकता है। वह निबंध, कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, कविता आदि विधाओं में निहित है। व्यंग्य को संकुचित अर्थ में न ले क्योंकि उसका दायरा काफी विस्तृत है। वैज्ञानिक आधार पर व्यंग्य विधा नहीं, वह एक अभिव्यक्ति प्रणाली, एक शैलीगत प्रवृत्ति सिद्ध होता है। अर्थात वह विधा न होकर शैली ही है। व्यंग्यशिल्पी हरिशंकर परसाई भी व्यंग्य को विधा नहीं मानते। उनके अनुसार - ‘‘व्यंग्य विधा नहीं है जैसे कहानी, नाटक या उपन्यास। व्यंग्य का निश्चित कोई स्ट्रक्चर नहीं है। वह किसी भी विधा में लिखा जा सकता है। व्यंग्य इस कारण ‘स्पिरिट’ है। व्यंग्य लेखक को यह शिकायत नहीं होनी चाहिए कि विश्वविद्यालय व्यंग्य को विधा क्यों नहीं मानते। उन्हें संतोष करना चाहिए कि व्यंग्य का दायरा इतना विस्तृत है कि वह सब विधाओं को ओढ लेता है।’’[२]

* परसाई का निबंध साहित्य : -

हरिशंकर परसाई का निबंध साहित्य काफी विस्तृत है। आरंभ में वे ‘अकथ’, ‘कल्पना’ जैसी पत्र-पत्रिकाओं में लिखते थे। वस्तुतःउन्होंने सन. १९४७ से ही लिखना आरंभ किया परंतु सन. १९५१ में उनका प्रथम कहानी संग्रह ‘हँसते हैं, रोते हैं’ प्रकाशित हुआ तथा सन. १९५४ में प्रथम निबंध संग्रह ‘भूत के पाँव पीछे’ प्रकाशित हुआ। उसके पश्चात् जो निबंध संग्रह प्रकाशित हुए वे यों हैं - ‘बेईमानी परत’ - १९६३, ‘निठल्ले की डायरी’ - १९६८, ‘और अंत में’ - १९६८, ‘ठिठुरता हुआ गणतंत्र’- १९७०, ‘शिकायत मुझे भी है’ - १९७०, ‘अपनी-अपनी बीमारी’ - १९७३, ‘वैष्णव की फिसलन’ - १९७३, ‘पगडंडियों का जमाना’ - १९७६, ‘विकलांग श्रद्धा का दौर’ - १९८०, ‘पाखंड का अध्यात्म’ - १९८२, ‘मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ’ - १९८७। इन संग्रहों के अलावा परसाई जी के अन्य निबंध भी प्रकाशित हुए हैं। वे सभी निबंध परसाई रचनावली भाग - ३ और ४ में प्रकाशित हैं। परसाई के निबंधें की संख्या लगभग ४०० हैं। उन्होंने मुख्य रूप से सामाजिक और राजनैतिक निबंध लिखे हैं।

* परसाई के निबंधें में सामाजिक पक्ष पर व्यंग्य : -

आजादी के पश्चात ही भरतीय जन-जीवन में सर्वाधिक परिवर्तन परिलक्षित होता है। व्यक्ति के सामाजिक संबंध बदलने लगे, पुरातन मान्यताओं का विरोध होने लगा तथा नवीनता के प्रति आग्रह भी बढा। हरिशंकर परसाई ने अपनी तत्कालीन परिस्थितियों का

संपूर्ण लेखा-जोखा अपने निबंधों में प्रस्तुत किया है। उन्होंने पारिवारिक एवं दांपत्य संबंध, सामाजिक रुढि-परंपराएँ, अंधश्रद्धा, नारी समस्या, दहेज प्रथा, बेमेल विवाह की समस्या, आबादी, यातायात, बेकारी, भ्रष्टाचार, महँगाई, मकान की समस्या, सामाजिक विसंगतिबोध,अखबार, इंजीनियर, फिल्म इंडस्ट्री, बाह्याडंबर,साहित्य, लोगों की प्रवृत्तियाँ तथा शिक्षा व्यवस्था जैसे समाज के हर एक अंग पर लेखनी चलाते हुए उस पर करारा व्यंग्य किया हैं। परसाई के प्रकाशक मायाराम सुरजन कहते हैं - 'परसाई ने मुझसे लेकर स्वयं को तक नहीं छोडा। हरिशंकर परसाई हिंदी के ऐसे जागरुक, सजग और सचेत व्यंग्यकार हैं जो केवल मजा लेने के लिए व्यंग्य नहीं लिखते। उनकी एक-एक पंक्ति सोद्देश्य और सार्थक है। वे उन लेखकों की जमात में पहले व्यक्ति हैं, जो भविष्य और सुखी मानव के लिए प्रतिबद्ध हैं।'

परसाई 'युग की पीडा का सामना' निबंध में तत्कालीन परिस्थिति का वास्तविक चित्र खिंचते हुए अनेकविद् समस्याओं का उद्घाटन एक साथ करते हैं - ''मुझे कुछ पीडा और संकट तो दीखते हैं। सत्रह साल बाद भी देश भूखा और नंगा है, छोटे-छोटे बच्चे होटलों में काम करते हैं। नाबालिग लडकियाँ पेट भरने को चकलों में बैठ जाती है। दहेज के कारण लडकियाँ बिन-ब्याही सूख जाती हैं। हर तरफ लूट-खसोट है। साधारण आदमी का कई तरफ से खून चूसा जा रहा है और कोई बचाव का रस्ता नजर नहीं आता। उधर युद्ध का संकट है। यह सब तो मेरी समझ में भी आता है। यही क्या युग की पीडा है ? यही तुम्हारे दर्द और संकट की अनुभूति का उत्स है।''[३] पगडंडियों का जमाना में परसाई शिक्षा क्षेत्र में स्थित बेईमानी की परत को खोलते हैं। उसकी खिल्ली उडाते हुए वे लिखते हैं - ''देखता हूँ कि हर सत्य के हाथ में झूठ का प्रमाणपत्र हैं। ईमान के पास बेईमानी की सिफरिशी चिट्ठी न हो, तो कोई उसे दो कौडी को न पूछे। यह सब सोचकर मैं ढीला हो गया। अब मैं बडे खुले मन से नंबर बढवाता हूँ।''[४] यहाँ पर परसाई का अनुभूति पक्ष प्रबल बनकर साने आता है।

परसाई जी ने स्वतंत्र हिंदुस्तान में रहनेवाले लाखों साधारण लोगों की आशा-अकांक्षा, जीवन-संघर्ष तथा संभवनाओं को बहुत ही नजदीक से देखा है और एक अहम बात यह है कि वे आम आदमी की जिंदगी को स्वयं जीये हैं, जहाँ संघर्ष के साथ अभाव था, जहाँ अभाव के साथ संपूर्ण युग की बौद्धिक समझ थी और जहाँ बौद्धिक समझ के साथ अनुभव और ज्ञान से अधिक वैज्ञानिक होती हुई जीवन-दृष्टि थी। यही जीवन-दृष्टि वह बिंदू है, जहाँ से परसाई के भीतर का लेखक सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक जीवन के प्रत्येक अंतर्विरोध को उसकी संपूर्ण सीढियों में देख लेता है। समवर्ती जीवन के दस्तावेज का कोई ऐसा अंग नहीं जिस पर परसाई जी ने लेखनी न चलाई हो। उनके लेखन की व्यापकता और गहराई को लेकर श्यामसुंदर मिश्र लिखते हैं - ''यदि समवर्ती जीवन के दस्तावेज इकट्ठे करने हैं, तो आप बेखटके परसाई जी के संपूर्ण लेखन को एक साथ सुनिश्चित क्रम में संजोकर इसे इस देश की जिंदगी का विश्वसनीय दस्तावेज बना सकते हैं, जहाँ जनसाधारण से लेकर बडे से बडे राजनैतिक नेता, प्रशासक, बुद्धिजीवी, मध्यवर्गीय अध्यापक, डॉक्टर, वकील, थानेदार, विश्व के बडे-बडे राष्ट्रनायक, कूटनीतिज्ञ, युद्धशास्त्री, प्रेमी, प्रमिकाएँ, अवसरवादी, पदलोलुप, साहूकार, पूँजीपति, राजनैतिक और सामाजिक घटनाएँ, अपराध, अनाचार,दिशाहीनता, शोषण की अमानवीय रुपांतर, अकाल, भूखमरी, बाढ, युवा आक्रोश, जन आंदोलन, सांप्रदायिक दंगे, धार्मिक अनाचार और इन सबसे बेखबर मध्यमवर्गीय शालीनता से अक्रांत रचनाकार और कलाकारों के साथ धार्मिक छद्म के भीतर जकडे हुए पंडे, पुजारी, महात्मा, भगवान, नये पंथों के संचालक और तथाकथित भारतीय संस्कृति के पेशेकार और अध्यात्मवादी सभी एक साथ मिल जायेंगे।''[५] इससे स्पष्ट होता है कि परसाई जी के निबंधों में व्यापकता के साथ गहराई भी निहित है।

परिवार एवं दांपत्य संबंध पर व्यंग्य करने के साथ-साथ कहीं-कहीं उनके प्रति सहानुभूति भी दर्शायी है। परिवार जैसी प्राथमिक एवं सर्वव्यापी सामाजिक संस्था का उद्‌भव निश्चय ही मनुष्य की सहज जैविक आवश्यकताओं और आधारभूत सामाजिक वृत्तियों से हुआ है। आधुनिक काल में परिवार एवं दांपत्य संबंध में अधिकाधिक टकराव निर्माण हो रहा है। परिवार में रहनेवाले हर एक सदस्य के प्रति दूसरे सदस्य के मन में अनास्था निर्माण होती दिखाई देती है। परिणाम स्वरूप परिवार विभक्त हो रहे हैं। विभक्त परिवार की वजह से बच्चे माँ-बाप के होते हुए भी अनाथ की जिंदगी जी रहे हैं। विघटन के कारण दांपत्य के मध्य प्रेमसंबंध प्रस्थापित होने के बजाय बिगड रहे हैं। रिश्ते-नातों में बनते-बिगडते संबंधों की स्थिति निर्माण हो गयी है। स्वातंत्र्योत्तर काल में बडे पैमाने पर अनेक साहित्यिकों ने परिवार एवं दांपत्य संबंध को रेखांकित किया है। हरिशंकर परसाई इससे कैसे अनछुए रह सकते हैं। उन्होंने तो बनते-बिगडते संबंध, रिश्ते-नातों के बीच निर्मित लचीलापन, आर्थिक व्यवहार के कारण पारिवारिक अनौचित्य पर अपने निबंधों में भरसक व्यंग्य कर ऐसे संबंधों की खूब खिल्ली उडाई है। उन्होंने कहीं-कहीं गरीबी, शोषण एवं अभावभरी जिंदगी को उद्‌घाटित कर पारिवारिक संबंधों में संघर्ष दर्शाया है। पूँजीपति वर्ग उसका पूरी तरह से शोषण करता है, ऐसे पात्रों को लेखक ने अगाह किया है कि आप हिम्मत न हारते हुए संघर्ष करो। उक्त विचार परसाई की प्रगतिशीलता के द्‌योतक हैं।

रुढि-परंपराएँ, भाग्यवाद एवं अंधविश्वास आज भी लोगों में अधिक मात्रा में पाया जाता है। परसाई ने इन बातों को लेकर स्थान-स्थान पर उसकी खिल्ली उडाई है। निम्नवर्गीय समाज तो इन परंपराओं से बाहर आने के लिए तैयार ही नहीं। उसे बाहर निकालने का प्रयास करें तो और अधिक धसता चला जाता है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है ‘‘इधर अगर कोई ब्राह्मण जूतों के पास बैठे चमार से कहे- चौधरी, इधर हमारे पास बैठो, तो वह जवाब देगा-अरे पंडितजी, हमारा का धरम नहीं है। बताओं भला, हमारो का जे धरम है कि आपकी बराबरी से बैठें। पूरब जनम में ऐसे पाप किये तो अब फल भोग रहे हैं। अब पाप करेंगे तो भगवान अगले जनम में सजा देगा।’’[६] परसाई ने इन समस्याओं को लेकर राष्ट्रीय और आंतर्राष्ट्रीय स्थिति का भी जायजा लिया है। अधविश्वास आम लोगों में ही नहीं बल्कि वह राजनेताओं में भी कुट-कुटकर भरा हुआ है। इस देश की समस्याओं को झाड-फूँक, टोना-टोटका आदि से ही हल किया जाता है। राजनेताओं की अंधविश्वासी प्रवृत्ति पर व्यंग्य करते हुए परसाई लिखते हैं ‘‘जब मेनन ने लोकसभा में सुरक्षा के लिए धन की माँग की तो गाँधीवादी आचार्य कृपलानी ने कहा यह महात्मा गांधी का देश है। हमने अहिंसा से स्वाधीनता की लडाई जीती है। हमें इतना पैसा हथियारों पर खर्च करने की क्या जरुरत है ? कुछ पुराणपंथी कहते थे- हमारे ऋषियों ने जो तप किया था, उसने हिमालय पर बिजली की तरंगे लहराती रहती है। वहाँ से कोई घुस नहीं सकता।’’[७] वस्तुत: वहीं से स्वतंत्र हिंदुस्तान पर चार बार आक्रमण हुआ है। तथा अंधविश्वास का और एक उदाहरण- महाराष्ट्र के पूर्वमुख्यमंत्री मनोहर जोशी जी कहते हैं- गणपति ने दूध पिया। देश की बागडौर सँभालनेवाले यदि अंधविश्वास का सहारा लेने लगेंगे तो देश का भविष्य अंधेरे में होगा। अत: परसाई समाज को लगी अंधविश्वास नामक दीमक को जड से उखाड फेंक देने के संकेत देते हैं।

परसाई ने जाति-व्यवस्था पर तो स्थान-स्थान पर व्यंग्य किया हैं। सदियों से हमारे देश में जातीय-व्यवस्था का भूत लोगों पर सवार है। वर्तमान परिस्थिति में शिक्षा एवं सामाजिक जागरुकता की भावना में छुआछुत, जातिगत भेदभाव का समाज में खुलकर विरोध होने लगा है। छुआछूत तथा जाति-पॉति में शिथिलता आयी दिखायी देती है फिर भी काफी मात्रा में इसका बोलबाला परिलक्षित होता है। परसाई ने ब्राह्मणें पर तो बहुत ही टिकास्त्र छोडे हैं। दूसरी ओर वे ब्राह्मणों की नीति स्थिति से समझौता करनेवाली बात उठाकर आम लोगों को उनसे सीख भी देते हैं। महानगर में तो जाति-पॉति को लेकर अक्सर दंगे, आगजनी जेसे दुर्व्यवहार होते रहते हैं। ज्यादातर हिंदू-

मुसलमानों के बीच यह विवाद दिखायी देता है। उत्तर प्रदेश में तो हरिजनों पर अधिक मात्रा में अन्याय-अत्याचार होता रहता है। सवर्णो की अमानवीयता को प्रस्तुत करते हुए परसाई लिखते हैं - " कमसे कम सौ हरिजन तो जलाने ही पडेंगे। अभी तक चार के जलाने की खबर आयी है। सवर्णो जरा जल्दी करो। कुछ शर्म खओं। दो महीने में चार हरिजन जलाओगे, तो अगामी २ अक्तूबर तक सौ कैसे पूरे होंगे।"[८] प्रस्तुत अवतरण में परसाई का सवर्णो के प्रति आक्रोश और निम्नवर्ग के प्रति सहानुभूति दिखायी देती है।

नारी समस्या को लेकर भी परसाई ने खूब लिखा है। परसाई की नारी के प्रति पूर्ण सहानुभूति रही है। स्वातंत्र्योत्तर परिस्थिति में तो नारी विषयक समस्याओं ने ओर अधिक जोर पकडा है। बलात्कार, दहेज, बेमेलविवाह, खोखला प्रेम, अन्याय-अत्याचार आदि का वह शिकार बन रही है। उसका शारीरिक और मानसिक दोनों रूपों में शोषण हो रहा है। परिवार में तो उसकी स्थीति और भी गयी-बीती है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है - "अगर कोई अपनी स्त्री को पीट रहा हो ओर पडोसी उसे रोकें, तो वह कैसे विश्वास से कह देता है - 'वह हमारी औरत है। हम चाहे उसे पीटें चाहे मार डालें। तुम्हें बीच में बोलने का क्या हक है।' ठीक कहता है वह। जब वह कद्दू काटता हे, तब कोई एतराज नहीं करता, तो औरत को पीटने पर क्यों एतराज करते है ? जैसे कद्दू वैसी औरत। दोनों उसके घर के हैं। घर की चीज में यही निश्चिंतता है। उसमें मजा भी विशेष है।"[९] तात्पर्य यह कि स्त्री की कीमत कद्दू समान हैं। उस पर कोई भी अन्याय-अत्याचार करता है।

उपर्युक्त समस्याओं के साथ-साथ दहेज प्रथा, बेमेल विवाह, खोखले प्रेम की समस्या, बढती हुई आबादी, बेकारी की समस्या, भूख समस्या, आदि को भी परसाई के निबंधों में व्यंग्य के साथ पाया जाता है। बढते हुए महानरों के साथ महानगरीय समस्याएँ,यातायात की समस्या महँगाई की समस्या, मकान की समस्या, बीमारी की समस्या तथा सामाजिक विसंगतियों का बोलबाला रहा है। उन्होंने अखबार, फिल्म इंडस्ट्री, इंजिनिअर, सेठ साहूकार तथा पूँजीपति, साहित्यकार, लोगों की प्रवृत्तियाँ किसी को नहीं छोडा है। हर किसी पर व्यंग्य करते हुए उसे समाज के सामने नंगा किया है।

शिक्षा का उद्देश्य होता है सुयोग्य नागरिक बनाना, जीवन को जीने योग्य बनाना, अपने कर्तव्यों के प्रति सजग कराना। किंतु वर्तमान शिक्षा-प्रणाली अपने दायित्वों के नर्वाह में सफल नहीं हो पा रही, अत: इसे बदलना नितांत जरुरी है। वर्तमान परिस्थिति में शिक्षा-जगत के संदर्भ में कई सवाल हमारे मन में उमड रहे हैं। परसाई जी स्वयं शिक्षा क्षेत्र से संबंधित रहे हैं। परिणाम स्वरूप उन्होंने शिक्षा क्षेत्र में स्थित असंगतियों को काफी नजदीक से देखा है। अत: वे शिक्षा-व्यवस्था में फैली गंदगी को अपनी लेखनी का विषय बनाते हैं। अन्होंने खास कर शिक्षा जगत में स्थित अव्यवस्था, बेईमानी, भ्रष्टाचार, डिग्रियों की निलामी, दादागिरी आदि बातों पर करारा व्यंग्य किया हैं। परसाई ने अध्यापक-छात्र-छात्रा संबंधों पर भी करारा व्यंग्य किया है।

* परसाई के निबंधों में धार्मिक पक्ष पर व्यंग्य :-

धर्म किसी रिवाजों तथा कर्मकांडों का समूह नहीं बल्कि एक ऐसा विश्वास है जो किसी अनंत सर्वतिशायी तत्त्व या सत्य पर केंद्रित होता हैं। मानव विकास हेतु धर्म की व्याख्या खूब की गई है, परंतु वर्तमान संदर्भ में हम देखते हैं कि वास्तविक धर्म की ओर मुँह मोडकर ही लोग चलते हैं। यह स्थिति सिर्फ आधुनिक संदर्भ में ही पायी जाती है ऐसी बात नहीं पुरातन काल से यह परिपाटी जारी हैं। परसाई जी ने इन्हीं बातों पर करारा व्यंग्य प्रस्तुत किया है। उन्होंने धार्मिक आडंबर, कर्मकांड, कालबाह्य धार्मिक बातें तथा धर्म के नाम पर अनाचार करनेवाले नकली पोंगा-पंडितों की खूब निंदा की है।

धार्मिक आडंबर परसाई जी स्थान-स्थान पर करारा व्यंग्य करते हैं। उन्होंने धार्मिक ग्रंथ, वेद, पुराण तथा ऋषि-मुनियों पर व्यंग्य करते हुए लिखा हैं - ''वैदिक आर्यो ने गेहूँ पैदा करना बाद में शुरु किया पहले सोमरस खोज लिया। रोटी बाद में देखी जायेगी, दारु का इंतजाम पहले कर लो। सामवेद में साठ-पैसठ श्लोक सोम की स्तुति में कहे गये हैं।''[१०] यहाँ परसाई ने नशा करनेवाले ढोंगी साधु पर करारा व्यंग्य किया हैं। उन्होंने हिंदू धर्म, पादरी, इस्लामी धर्म और उसके कानून को पाठकों के सामने रखकर उस पर करारा व्यंग्य किया है।

वेद और पुराणों में कर्मकांड के अंतर्गत यज्ञ, दान और तपस्या को महत्त्व दिया गया है। यह कार्य विवेकियों की चित्तशुद्धि का कारण है। परंतु वर्तमान परिस्थिति में कर्मकांड से इंसान की चित्तशुद्धि की अपेक्षा उसके जीवन में अनंत जटिलताओं को ही स्थान मिल रहा है। परसाई हमेशा कर्मकांड का विरोध करते हैं। उनकी मान्यता है कि कर्मकांड एक ढकोसला है, उससे भयभीत न होकर उसका डटकर मुकाबला करना चाहिए। साथ में वे पुनर्जन्म की भी खूब खिल्ली उडाते हैं।

मानव सामाज, उसके आचार-विचार, आचरण सब परिवर्तनशील हैं। समाज में धर्म संबंधी व्रत, उपवास, मुर्तिपूजा, तीर्थाटन, नमाज, रोजा, स्यापा आदि सभी धार्मिक बातें आजकल परिवर्तन के कारण कालबाह्या होती चली जा रही है। परसाई ने अपने निबंधों में कालबाह्य धार्मिक बातों की खिल्ली उडाते हुए उन पर करारा व्यंग्य किया है। 'सहानुभूती' निबंध में स्यापा प्रथा की खिल्ली उडाते हुए परसाई लिखते हैं, - ''पहले 'मदनोत्सव' होते थे, अब रुदनोत्सव होते हैं। इन रुदनोत्सव में सच्चा रोनेवाला तो रह जाता है, झूठा रोनेवाला रंग जमा लेता है।''[११] परसाई यहाँ कालबाह्य धार्मिक बातों पर तीक्ष्ण व्यंग्य करते हैं।

वर्तमान परिस्थिति में धर्म के नाम पर अनाचार करनेवालों पर परसाई डंके की चोट पर व्यंग्य करते हैं। सच्चरित्रता का पर्दा ओढकर मानव धर्म की आड में अमानुष कार्य करनेवाले धर्म के ठेकेदार पर व्यंग्य करते हुए परसाई लिखते हैं - ''एक स्त्री नौकरी के सिलसिले में एक बडे आदमी के पास सच्चरित्रता का प्रमाणपत्र लेने गयी थी। बडे आदमी ने उसे पहले अपने शयन-कक्ष में ले जाना चाहा और बाद में सच्चरित्रता का प्रमाणपत्र देना चाहा। पहले देवता आदमी बनकर ठगते थे, अब आदमी देवता बनकर ठगते हैं।''[१२] इससे स्पष्ट होता है कि जो लोग बडे कहलाते हैं वे वास्तव में बडे न होकर उनके दर्शन मात्र थोडे होते हैं। इसके साथ-साथ परसाई नकली साधु, झूठे, स्वार्थी पंडित, आदि पर करारा व्यंग्य करते हैं।

* निष्कर्ष :-

व्यंग्य सम्राट हरिशंकर परसाई का स्थान व्यंग्य लेखन में सर्वश्रेष्ठ है। उन्होंने सभी पक्षों पर मर्मभेदी प्रहार किए हैं। परसाई के निबंधों में राजनीतिक पक्ष प्रबल रूप में उपस्थित है। उन्होंने व्यंग्य को विधा नहीं 'स्पिरीट' कहा है। परसाई के निबंधों में सामाजिक पक्ष के अंतर्गत उन्होंने समाज में प्राप्त विभिन्न विकृतियाँ, पारिवारिक एवं दांपत्य संबंध, सामाजिक रुढि परंपराएँ, अंधविश्वास, नारी समस्याएँ, महानगरीय समस्याएँ आदि पर लेखनी चलाते हुए उस पर करारा व्यंग्य किया हैं। परसाई मूलत: मार्क्सवादी होने के कारण उन्होंने पूँजीपति वर्ग पर प्रहार कर सर्वहारा वर्ग के प्रति सहानुभूति दर्शायी हैं। परसाई के लेखन के संदर्भ में कहना ोगा कि उन्होंने समाज के हर एक अंग पर अपनी लेखनी चलायी हैं। धार्मिक पक्ष में परसाई ने धार्मिक आडंबर, कर्मकांड, धर्म के नाम पर अनाचार करनेवाले पोंगा पंडित, कालबाह्य धार्मिक बातें, नकली साधु आदि पर करारा व्यंग्य किया है।

* संदर्भ :-

१. हरिशंकर परसाई - सदाचार का ताबीज, भूमिका से, पृष्ठ - १०।

२. हरिशंकर परसाई - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृष्ठ - १३-१४।

३. हरिशंकर परसाई - निठल्ले की डायरी, पृष्ठ - ३५-३६।

४. सं. कमला प्रसाद - परसाई रचानावली खंड - ३, पगडंडियों का जमाना से, पृष्ठ -१९२।

५. हरिशंकर परसाई - पाखंड का अध्यात्म, भीतरी फ्लॅप से उद्धृत।

६. सं. कमला प्रसाद - परसाई रचनावली खंड - ४, खुदा से लडाई की सजा से, पृष्ठ - १४४।

७. वहीं, वहीं, अब कृष्णमेनन की याद क्यों ? से, पृष्ठ- २९४।

८. वहीं, वहीं खंड -३, छुट्टीवाला शोक से, पृष्ठ - २९४।

९. वहीं, वहीं, आँगन में बैंगन से, पृष्ठ - १८९।

१०. सं. कमला प्रसाद - परसाई रचनावली खंड - ४ जहरीली शराब से, पृष्ठ - १३२।

११. वहीं, वहीं, खंड - ३ सहानुभूति से, पृष्ठ - २०९।

१२. वहीं, वहीं, पगडंडियों का जमाना से, पृष्ठ - १९२।